2

नये राज्य एवं राजाओं का उदय

शबनम और इमरान दोनों को ऐतिहासिक धारावाहिक देखने का शौक था। ऐसा ही एक धारावाहिक 'पृथ्वीराज चौहान' का दूरदर्शन पर प्रसारण हो रहा था। इस धारावाहिक को देख दोनों के मन में पृथ्वीराज से संबंधित कई प्रश्न पैदा हुए जैसे–

(i) पृथ्वीराज किस राज्य का राजा था ?

(ii) उस समय इनके समकालीन और कौन–कौन राजा हुए ?

(iii) उस समय हमारे देश की राजनैतिक स्थिति कैसी थी ?

पिछले अध्याय में आपने देखा कि भारत के पश्चिमी किनारे पर अरबों का आगमन हुआ और उनकी सत्ता स्थापित हुई। इसी समय उत्तरी एवं मध्य भारत के राजनीतिक मानचित्र पर राजपूतों का उदय हुआ। सच तो यह है कि गुप्त वंश के पतन के बाद 7वीं से 12वीं सदी के बीच एक नई प्रवृत्ति का उदय हुआ। राजनीति के क्षेत्र में टूट की प्रक्रिया आरम्भ हुई जिसके परिणामस्वरूप उत्तर और दक्षिण भारत में अनेक छोटे–छोटे क्षेत्रीय राज्यों का उदय हुआ। समय–समय पर हर्ष जैसे शासकों ने एक बड़े भू–भाग

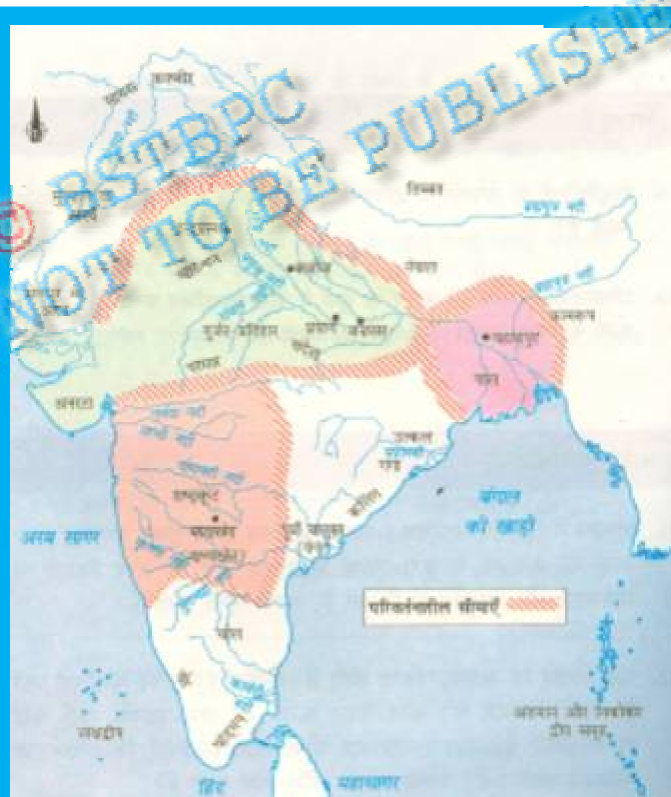

मानचित्र सातवीं–बारहवीं शताब्दियों के प्रमुख राज्य

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED

पर शासन करने का प्रयास किया, परन्तु बाद के शासकों को उसमें आशातीत सफलता नहीं मिली।

नये राजवंशों का उदय :– मानचित्र 1 में उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में सातवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच शासन करनेवाले प्रमुख राजवंशों को दिखाया गया है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इनमें से कई राजवंश के राजाओं के अधीनस्थ कर्मचारी, सामंत, बड़े भू–स्वामी एवं योद्धा सरदार थे। जब उनके स्वामी कमजोर पड़ गए तो उन्होंने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। उदाहरण के तौर पर राष्ट्रकूट कर्नाटक के चालुक्य राजाओं के अधीन थे। आठवीं सदी के मध्य में एक राष्ट्रकूट प्रधान, दंतीदुर्ग ने अपने को शासक के रूप में स्थापित कर राष्ट्रकूट वंश की नींव डाली। दक्षिणापथ के उत्तरी भाग में मान्यखेत उसकी राजधानी थी। इसे आप मानचित्र 1 में देख सकते हैं। कुछ अन्य शासक जैसे गुर्जर प्रतिहार सम्भवतः ब्राह्मण थे। इन्होंने अपने परम्परागत कार्य छोड़कर शस्त्र अपना लिया और मध्य भारत (राजस्थान एवं गुजरात) में एक स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। इस वंश का महत्वपूर्ण राजा नागभट्ट प्रथम था जिसने अरबों से लोहा लिया। ग्वालियर प्रशस्ति में उसे मलेच्छों का नाशक बताया गया है।

BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

ukxHkVV dh miyfCèk;k¡ %& कई शासकों ने प्रशस्तियों में अपनी उपलब्धियों का वर्णन किया है, ग्वालियर (मध्य प्रदेश) से मिली संस्कृत की एक प्रशस्ति में प्रतिहार नरेश नागभट्ट के कामों का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

आंध्र, सैंधव (सिंध), विदर्भ (महाराष्ट्र का एक हिस्सा) और कलिंग (उड़ीसा का एक हिस्सा) के राजा उनके आगे तभी धराशायी हो गए जब वे राजकुमार थे........ उन्होंने कन्नौज के शासक चक्रयुद्ध को विजित किया.......

उन्होंने वंग (बंगाल का हिस्सा), अनर्त (गुजरात का हिस्सा), मालवा (मध्य प्रदेश का हिस्सा) किरात (वनवासी), तुरूष्क (तुर्क), वत्स, मत्स्य (दोनों उत्तर भारत के राज्य) के राजाओं को पराजित किया......

कुछ उदाहरण ऐसे भी हैं जहाँ नए शासक उस क्षेत्र के महत्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा चुने गए थे। बिहार एवं बंगाल के प्रथम पाल शासक गोपाल का चयन ऐसे ही हुआ था। तिब्बती इतिहासकार लामा तारनाथ भी इसकी पुष्टि करते हैं। खलीमपुर ताम्र–पत्र से भी ज्ञात होता है कि अराजकता से तंग आकर बंगाल की प्रजा ने स्वयं गोपाल को अपना राजा चुना। इसी के वंशज आगे पाल वंश के नाम से प्रसिद्ध हुए।

कुछ उदाहरण महिला शासकों का भी है। महिला शासक का सबसे जाना माना उदाहरण कश्मीर की रानी का है जो दिद्दा (बड़ी बहन) के नाम से लोकप्रिय थी। वह

मंत्रियों और सेना की मदद से रानी बनी।

ऊपर वर्णित दृष्टान्तों से हम समझ सकते हैं कि :

- यह जरूरी नहीं था कि शासक किसी शासकीय परिवार से ही संबंधित हो।
- अधीनस्थ कर्मचारी कुछ स्थितियों में शासक भी बन सकते थे।

अन्य लोग मंत्रियों, सैनिकों और महत्वपूर्ण लोगों के समर्थन से शासक बने। इस काल के इतिहास में चार राजपूत वंश सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। वे प्रतिहार (या परिहार), चौहान (या चहमान), सोलंकी (या चालुक्य), और परमार थे। कई सामन्तों ने भी स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

सामंत :– उस समय के कई अभिलेखों और किताबों में इस वर्ग के लोगों का जिक्र है। इस वर्ग के लोगों के लिए कई नाम भी प्रचलित थे। जैसे : सामंत, राय, ठाकुर, राणा और रावत। आपको याद होगा कि पहले के समय के राजा युद्ध में जब किसी राजा को हराते थे, तो उसके राज्य को अपने राज्य में मिला लेते थे। लेकिन आपको यह जानकर आश्चर्य भी होगा कि 400 ई0 से 1000 ई0 के बीच के समय में युद्ध में हारे हुए राजाओं को आमतौर पर अपने राज्य वापस भी मिल जाते थे। बदले में उन्हें कुछ शर्तें माननी पड़ती थीं। पराजित राजा को यह स्वीकार करना पड़ता था कि विजयी राजा उसका स्वामी है और वह विजयी राजा के चरणों में रहनेवाला सेवक। विजयी राजा अधिपति कहलाता था। पराजित राजा उसका सामंत कहलाता था। यह दिखाने के लिए कि वह किस राजा का सामंत है, पराजित राजा को अपने नाम के आगे यह बात लिखनी पड़ती थी। इसका एक उदाहरण पढ़िए।

उपाधि का क्या अर्थ होता है ? शिक्षक की सहायता से आपस में चर्चा करें।

© WBBPC
WBCOPY: NOT TO BE PUBLISHED

"परमभट्टारक परमेश्वर महाराजाधिराज श्री भोजदेव के चरणों में रहनेवाले महासामन्त महाराजाधिराज श्री क्षितिपाल का शासन था।"

आपने क्या पाया ? आपने पाया होगा कि भोजदेव और क्षितिपाल दोनों के नामों के साथ उपाधियाँ लगी हैं। पर सामंत की उपाधि राजा की उपाधि से छोटी है। इसी से

पता चलता है कि राजा अधिक शक्तिशाली माना जाता था। सामन्त बनने पर हारे हुए राजा को और भी कई शर्तें माननी पड़ती थीं। उसे अधिपति के दरबार में समय–समय पर मूल्यवान भेंट भेजनी पड़ती थी। मौके पर उसे खुद अधिपति राजा के दरबार में हाजिर होना पड़ता था। आवश्यकता पड़ने पर सामंत को अधिपति राजा की मदद के लिए अपनी सेना भी भेजनी पड़ती थी। इस समय जितने भी छोटे–बड़े राजा थे वे सामन्त बनाने की नीति ही अपनाते थे।

भूमि के स्वामित्व और उससे संबंधित सेवा की कुछ शर्तों पर आधारित व्यवस्था को सामंतवादी व्यवस्था कहते हैं।

राज्यों में प्रशासन :– राजा प्रशासन का केन्द्र बिन्दु अर्थात सर्वशक्तिमान होता था। जैसा कि उनकी बड़ी–बड़ी उपाधियाँ जैसे, महाराजाधिराज (राजाओं के राजा) परमभट्टारक, परमेश्वर, त्रिभुवन–चक्रवर्तिन (तीन भुवनों का स्वामी) आदि से बोध होता है। अभिलेखों तथा तत्कालीन साहित्य में केन्द्रीय शासन से संबद्ध अनेक पदाधिकारियों का उल्लेख है, जैसे संधि–विग्रहिक (विदेशी विभाग का प्रधान) अक्षपटालिक (आर्थिक या राजस्व मंत्री), भाण्डागारिक (राजकीय भंडार का अधिकारी), महादण्डनायक (पुलिस विभाग का प्रधान) आदि। सर्वशक्तिमान होने के बावजूद राजा अपने सामन्तों के साथ–साथ ब्राह्मणों, किसान तथा व्यापारी संगठनों के साथ सत्ता की साझेदारी करते थे। प्रायः राज्यों में उत्पादकों का एक वर्ग था जिसमें किसान, पशुपालक एवं कारीगर आते थे। राज्य की आय के अनेक स्रोत थे, किन्तु मूलस्रोत राजस्व ही था जिसे राजयोग या उपरिकर कहा जाता था। सभी उत्पादकों से अपने उत्पाद का एक हिस्सा लगान मानकर वसूला जाता था। व्यापार तथा उद्योग कर भी आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत था। किसानों को अपनी उपज का 1/6 तथा 1/3 के बीच भू–राजस्व देना होता था। उपरोक्त स्रोतों से प्राप्त आय

यह थोड़ा संस्कृत और थोड़ा तमिल में लिखा हुआ ताम्रपत्रों का एक संग्रह है, जिसमें नौवीं सदी में एक शासक के द्वारा दिए गए भूमि अनुदान का उल्लेख है। जिन कड़ियों से ये पत्र जुड़े हैं उन पर राजसी मुहर लगी है जो यह बतलाने के लिए है कि यह एक प्रमाणिक दस्तावेज है।

WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED © BSTBPC

का एक बहुत बड़ा हिस्सा मंदिरों और किलों के निर्माण में लगाए जाते थे। इन संसाधनों का उपयोग युद्धों में भी होता था।

राजा लोग प्रायः ब्राह्मणों को भूमि अनुदान से पुरस्कृत करते थे। ये ताम्र पत्रों पर अभिलिखित होते थे, जो भूमि पाने वालों को दिए जाते थे। ये ब्राह्मण शासकों के लिये यज्ञ करते थे। वे शासकों के लिए वंशावली भी तैयार करते थे जिसमें यह दिखाने का प्रयास करते थे कि शासक किस प्रकार से पुराने और वैभवशाली शासक परिवारों से संबंधित हैं।

कन्नौज के लिए संघर्ष :– जैसा कि आप जानते हैं कि भारत पर अरबों के आक्रमण के बाद सम्पूर्ण प्रायद्वीप में तीन महत्वपूर्ण शक्तियों का उदय हुआ। ये तीन महत्वपूर्ण शक्तियाँ थीं मध्य एवं पश्चिम भारत के गुर्जर–प्रतिहार, दक्कन के राष्ट्रकूट और बंगाल के पाल। अपने–अपने क्षेत्रों में इन सभी ने लम्बे समय तक राज किया, किन्तु इन सभी का अधिकांश समय आपसी संघर्ष में बीता। इस संघर्ष का अखाड़ा कन्नौज बना। आइए इस पर गौर करें कि कन्नौज आखिर क्यों इनके संघर्ष का केन्द्र बिन्दु बना ?

(1) जैसा कि कक्षा छः में आपने पढ़ा था कि कन्नौज हर्ष की राजधानी और उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध नगर था। जो इस नगर पर अधिकार कर लेता, वह उत्तर–भारत के राजा के रुप में प्रतिष्ठित हो जाता था।

(2) पालों के लिए मध्य भारत तथा पंजाब, और प्रतिहारों एवं राष्ट्रकुटों के लिए गंगा के मैदान में पहुँचने के मार्ग पर कन्नौज से बेहतर नियंत्रण हो सकता था।

(3) कन्नौज गंगा के तट पर स्थित होने के कारण नदी मार्ग से होने वाले व्यापार की दृष्टि से उत्तर एवं पूर्वी भारत के मध्य महत्वपूर्ण कड़ी था।तीनों राज्य इस संघर्ष में लगे रहे और बारी–बारी से इन्होंने कन्नौज पर अधिकार कर लिया। इतिहासकारों ने इसे कन्नौज के लिए त्रिपक्षीय (तीन पक्षों का) संघर्ष कहा है।

आप सोच रहे होंगे कि त्रिपक्षीय संघर्ष में विजयी कौन हुआ?

कन्नौज पर अधिकार स्थापित करने की इच्छा रखने वाले तीनों शक्तियाँ परस्पर युद्ध करते–करते थक गये थे। वे आपस के युद्धों में इतने व्यस्त हो गए कि उनको यह भी पता न चला कि वे कितने कमजोर हो गए हैं। अंततः इन तीनों राज्यों का पतन हो गया। उनकी शक्ति लगभग एक समान थी और वे मुख्यतः विशाल सेनाओं पर निर्भर करती थी। इन सेनाओं का खर्च उठाने के लिए आवश्यक स्रोत भी एक समान थे। इनके राजस्व का एक बहुत बड़ा हिस्सा इस सैन्य अभियानों में खर्च हो गया। हमेशा संघर्ष में लगे रहने के कारण इनका ध्यान अपने सामंतों से हट गया। अवसर का लाभ उठाकर धीरे–धीरे इन सामंतों ने अपने आपको स्वतंत्र

> इन तीनों के पतन के क्या कारण हो सकते हैं ? चर्चा करें।

WEBCOPY: NOT TO BE REPUBLISHED

कर लिया। सामंतों की अवज्ञा और उत्तर पश्चिम तथा दक्षिण के आक्रमणों ने उत्तरी भारत को और भी कमजोर कर दिया। जब उन पर उत्तर पश्चिम से तुर्कों का आक्रमण हुआ तब वे सही ढंग से अपनी रक्षा न कर सके। इन आक्रमण करनेवालों में सबसे पहला महमूद गजनवी था।

इससे पहले कि हम आक्रमणों का अध्ययन करें इस विषय में यह जानना आवश्यक है कि उस समय भारत की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति क्या थी ?

उस समय सम्पूर्ण प्रायद्वीप अनेक छोटे–छोटे राज्यों में बँटा था। इनके आपसी संबंध अच्छे नहीं थे। उत्तरी भारत में हिन्दूशाही, कन्नौज, कालिंजर, गुजरात, बुन्देलखण्ड, मालवा, बंगाल, कश्मीर, इत्यादि कुछ प्रमुख राज्य थे। इनमें कोई भी राज्य इतना शक्तिशाली नहीं था जो इन्हें एक रखकर योग्य नेतृत्व प्रदान कर सके। राजनीतिक एकता के अभाव में सांमतीकरण की प्रकिया भी जारी रही। एक केन्द्रीय राज्य के अर्न्तगत अनेक छोटे–बड़े सामंतों का अस्तित्व था। ये सामंत अपनी क्षेत्रीय चेतना तथा सैनिक शक्ति द्वारा केन्द्रीय सत्ता को कमजोर करने का अवसर तलाशते रहते थे। यद्यपि राजपूत उस समय उत्तर भारत की महत्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति थे पर उनकी कुछ अपनी कमजोरियाँ थीं। राजपूतों में युद्ध को गौरवपूर्ण रूप प्रदान किया गया था। प्रायः शासक अपने सम्मान की रक्षा के लिए आपस में ही युद्ध करने के लिए तत्पर रहते थे। इन राज्यों में बाहरी आक्रमणकारियों का मिलकर सामना करने की भावना नहीं के बराबर थी। इसके अतिरिक्त दो मुस्लिम राज्य भी थे। मुल्तान का राज्य जिसमें शियाओं का प्रभुत्व था और मंसूरा (सिन्ध) का राज्य जिसमें अरब वंशी शासक था।

तुर्क आगमन के समय भारत की सामाजिक दशा भी बहुत अच्छी नहीं थी। तत्कालीन समाज में शासक वर्ग, सैनिकों एवं आम जनता में तालमेल का अभाव था। राजा और जनता के बीच दूरी काफी अधिक थी। प्रशासन तथा सेना के कुछ पदों पर ब्राह्मणों तथा राजपूतों की अधिकांश नियुक्तियाँ वंशानुगत होती गईं। इसमें एक ओर तो अन्य वर्ग तथा जाति के लोग राज्य के प्रति उदासीन होते गये और दूसरी ओर अयोग्य व्यक्ति भी उत्तराधिकार के रूप में उच्च प्रशासनिक पद प्राप्त करने लगे। समाज का हर व्यक्ति सैनिक नहीं बन सकता था। देश जैसी व्यापक अवधारणा से आम लोग परिचित नहीं थे। शासकों के बदल जाने से आम जनता को कोई फर्क नहीं पड़ता था। ऐसी परिस्थिति में निम्न वर्ग में संकट के समय में राज्य के लिए कुछ कर सकने की भावना नहीं के बराबर थी। इस काल में परम्परागत चार मुख्य वर्ण अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के अतिरिक्त अनेक उपजातियाँ एवं नयी जातियों का प्रार्दुभाव हुआ। वर्ण व्यवस्था ने लोगों की विचारधारा को संकुचित कर दिया और उसमें बाहरी आदान–प्रदान के लिए स्थान न रहा। जैसा कि तारीखे–हिन्द के लेखक

WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

अलबेरूनी ने संकेत किया ''हिन्दुओं में यह दृढ़ विश्वास है कि भारत के समान और कोई देश नहीं है, कोई ऐसा राष्ट्र नहीं है, कोई राजा उनके राजा के समान नहीं है तथा अन्य कहीं भी विज्ञान उनके विज्ञान के समान नहीं है।''

महमूद गजनवी

गजनी,आधुनिक अफगानिस्तान में स्थित एक छोटा सा राज्य था। एक तुर्क सरदार ने दसवीं शताब्दी में इस राज्य की स्थापना की थी। उसके उत्तराधिकारियों में महमूद भी था। वह गजनी को एक बड़ा और शक्तिशाली साम्राज्य बनाना चाहता था। अतः उसने मध्य एशिया के कुछ भागों, ईरान और उपमहाद्वीप के उत्तर–पश्चिमी हिस्से को जीत लेना चाहा। सन् 1010 और 1025 के बीच महमूद ने उत्तर भारत के केवल उन नगरों पर आक्रमण किया जिनमें बहुत से सम्पन्न मन्दिर थे। इन नगरों में मथुरा, थानेश्वर, कन्नौज, वृंदावन, और सोमनाथ थे। इनमें गुजरात का सोमनाथ मंदिर अपने धन और वैभव के लिए काफी प्रसिद्ध था। सन् 1030 ई0 में महमूद की मृत्यु हो जाने पर उत्तर भारत के लोगों को राहत मिली क्योंकि उसके आक्रमणों से सामान्य जन–जीवन प्रभावित होता था।

lkeuFk efnj ds ckjs e fo'k"k :i ls oxZ e f'k{kd dh lgk;rk ls ppkZ djsA

समकालीन इतिहासकारों ने महमूद के भारत आक्रमणों के उद्देश्य का विवरण देते हुए लिखा है कि महमूद भारत में इस्लाम धर्म की प्रतिष्ठा को स्थापित करना चाहता था। जबकि कुछ इतिहासकार का मानना है कि महमूद का उद्देश्य भारत में धन लूटना ही था ताकि इस धन से मध्य एशिया में साम्राज्य–विस्तार के लिए सैनिक साधन जुटा सके।

©BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

आक्रमणों का प्रभाव

महमूद के आक्रमणों का प्रभाव भारत पर स्थायी नहीं प्रतीत होता है। उसने भारत में कोई स्थायी राज्य बनाने का प्रयास नहीं किया। हर विजय–अभियान के बाद धन लूटकर वह गजनी वापस लौटता रहा। भारत पर उसने लगभग सत्रह बार आक्रमण किए और प्रत्येक बार भारतीय राजाओं की सैनिक शक्ति को आघात पहुँचाया तथा उन्हें पराजित किया। इन आक्रमणों से बाहरी शक्तियों को भारत की राजनीतिक एवं सैनिक दुर्बलता का पता चला। आगे चलकर तुर्क और अफगानों ने कई बार भारत पर चढ़ायी की तथा एक स्थायी सम्राज्य की स्थापना में सफल रहे।

vkids fopkj e egen ds Hkkjr vkØe.k ds D;k mís'; gks ldrs gSa

अपनी नकारात्मक छवि के बावजूद महमूद के आक्रमणों ने इस्लामी और हिन्दू

संस्कृति के बीच सम्पर्क में योगदान दिया। 'शाहनामा' नामक महाकाव्य का लेखक फिरदौसी उसी के संरक्षण में रहा। उसी ने मध्य एशिया के प्रसिद्ध विद्वान अलबेरूनी को भारत भेजा। उसने भारत के संबंध में अपनी प्रसिद्ध रचना ''तहकीकाते–हिन्द'' लिखी। इस पुस्तक में भारत और यहाँ के निवासियों के सामाजिक जीवन का विस्तार से वर्णन किया गया है।

महमूद गजनवी के आक्रमणों के लगभग डेढ़ सौ वर्षों बाद तुर्कों के आक्रमण का दूसरा चरण उत्तरी भारत में आरम्भ हो गया। इन आक्रमणों का नेतृत्व गौर के शासक मुहम्मद गौरी ने किया। उसकी इच्छा केवल लूटमार करने की ही नहीं थी, बल्कि वह उत्तर भारत को भी जीतकर अपने राज्य में मिला लेना चाहता था। मुहम्मद गौरी के अभियान बड़े व्यवस्थित होते थे। उसने यह महसूस किया कि मुलतान और सिंध को केन्द्र बनाकर भारत के भीतरी भाग को नहीं जीता जा सकता है। अतः उसने भारत विजय का केन्द्र पंजाब को बनाया। पंजाब विजय के फलस्वरूप उसके राज्य की सीमा, अजमेर और दिल्ली के राजा पृथ्वीराज चौहान की राज्य की सीमा से स्पर्श करने लगी। 1191 ई॰ में भटिंडा के निकट तराइन गाँव के मैदान मे हुये प्रथम युद्ध में गौरी पराजित हुआ। इस पराजय की परवाह किए बिना 1192 में तराइन के द्वितीय युद्ध में उसने पृथ्वीराज को पराजित किया। तराइन की जीत ने उत्तरी भारत में तुर्की राज्य की स्थापना को लगभग निश्चित कर दिया। गौरी के भारत पर आक्रमणों के दूरगामी परिणाम हुए। इसके फलस्वरूप दिल्ली सल्तनत की स्थापना हुई जिसके बारे में आप विस्तार से अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

दक्षिण के राज्य

उन दिनों उत्तर भारत की तरह दक्षिण भारत में भी

© BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

> **एक नया शहर**
> राजेन्द्र चोल अपनी सेना को गंगा नदी तक ले गया। वहाँ से गंगा का पानी लेकर और अपने नये नगर में इस पानी को रखा। यह शहर **xxb&dk.M &pkyije** के नाम से जाना गया। इसका अर्थ था चोल शासक का नगर जो गंगा को लेकर आया था अर्थात् जिसने उत्तर भारत पर विजय प्राप्त की थी।

अनेक राज्य थे। ;मानचित्र–2 पर गौर करें), कृष्णा नदी के उत्तर के राज्य दक्षिण पथ के राज्य तथा कृष्णा नदी से दक्षिण के राज्य सुदूर दक्षिण के राज्य थे। दक्षिण पथ के राज्यों में राष्ट्रकूट तथा चालुक्य प्रमुख थे। इनके बारे में आप समझ चुके हैं। सुदूर दक्षिण के राज्यों में चोल, चेर, पाण्ड्य आदि प्रमुख थे। आधुनिक मदुरै क्षेत्र में चोल सम्राज्य के दक्षिण में पाण्ड्य राज्य था। आधुनिक केरल प्रांत में चेर वंश का शासन था।

चोल राजाओं ने तंजौर के आस–पास के क्षेत्र तमिलनाडु से अपना शासन प्रारंभ किया। धीरे–धीरे पल्लव वंश के शासक और अन्य स्थानीय शासकों को पराजित कर अपने को दक्षिण में सबसे शक्तिशाली बना लिया। लेकिन साम्राज्य की स्थापना करने वाले आरंभिक चोल शासकों में विजयालय (846–871 ई0) था। उसने तंजौर को जीतकर अपने आपको एक स्वतंत्र राज्य का शासक घोषित किया।

चोल वंश के राजाओं में सबसे उल्लेखनीय राजा राजराज प्रथम और उसका पुत्र राजेन्द्र चोल है। राजराज प्रथम (958–1016 ई0) एक कुशल सेना संचालक था और उसने अनेक दिशाओं में आक्रमण किये। राजराज दक्षिण पूर्व एशिया के व्यापार में अरबों के आधिपत्य से परिचित था। अतः वह एक सामुद्रिक विजय के लिए निकला। उसने श्रीलंका और मालद्वीप नामक द्वीपों पर अधिकार जमाकर अरबों के आधिपत्य को चुनौती दी।

राजराज का पुत्र राजेन्द (1014–1044 ई0) अपने पिता से भी ज्यादा महात्वाकांक्षी था। उसने एक विशाल जल सेना का गठन किया। उसके दो युद्ध बड़े ही साहसिक और वीरतापूर्ण थे। एक तो वह जिसमें उसकी सेनाएँ पूर्व भारत के समुद्र तट से होकर उड़ीसा को पार करती हुई गंगा नदी तक पहुँच गयी।राजेन्द्र का दूसरा अभियान श्रीलंका एंव दक्षिण पूर्व एशिया (दक्षिण मलाया प्रायद्वीप तथा सुमात्रा) के देशों में हुआ था। इस अभियान में उसने जल एंव थल सेना का उपयोग किया। इस अभियान का मुख्य उद्देश्य अपने राज्य के व्यापारिक हितों की रक्षा करना था।

चोल प्रशासन

चोल राजाओं के अनेक अभिलेखों से उनकी शासन व्यस्था की जानकारी मिलती है।

WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

राजा राज्य में सबसे अधिक शक्तिशाली व्यक्ति होता था। फिर भी शासन कार्यों के संचालन के लिए वह अपने मंत्री–परिषद् की सलाह लेता था। उसके आदेश (जिरूवाक्य केल्वी) उसका निजी सचिव लिख लिया करता था। कुछ अधिकारियों के नाम भी मिलते हैं इनमें ओलैनायकम् (प्रधान सचिव), पेरून्दरम् (प्रधान कर्मचारी) एवं शीरूत्तरम् (निम्न कर्मचारी) आदि उल्लेखनीय हैं। इस व्यवस्था से प्रतीत होता है कि चोल शासकों ने सुसंगठित नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) का विकास किया।

> आज के नागरिक सेवा से चोलकालीन नागरिक सेवा की तुलना कर, चर्चा करें।

सम्पूर्ण चोल राज्य को राष्ट्र कहा जाता था। प्रशासन की सुविधा हेतु सम्पूर्ण राष्ट्र कई इकाइयों में विभक्त था जिन्हें मण्डलम कहा जाता था। प्रत्येक मण्डलम् , कोट्टम्(कमिश्नरी) और प्रत्येक कोट्टम नाडू (जिला) में बँटा था। पुनः प्रत्येक नाडू कुर्रम (तहसील या ग्राम समूह) में विभाजित किया गया था। मण्डलम का प्रधान तो, राजवंशीय होता था लेकिन कोट्टम, नाडू व कुर्रम के अनेक अधिकारी व कर्मचारी होते थे। सभी अपने क्षेत्र की गतिविधियों की सूचना अपने से ऊपर वाली इकाइयों को देते थे।

ग्राम स्वशासनः–

गाँव का स्थानीय स्वशासन चोल शासन प्रणाली की प्रमुख विशेषता थी। बहुत से गाँव में शासन का संचालन राजकीय कर्मचारियों के द्वारा न कर स्वयं गाँव वालों द्वारा किया जाता था। यहाँ तीन प्रकार की ग्राम सभाओं का उल्लेख मिलता है।

> क्या आपके विद्यालय या गाँव में इस तरह की काई समिति कार्य करती है ?यदि हाँ तो कैसे ?

(1) उर (सर्वसाधारण लोगों की ग्रामसभा थी)

(2) सभा या महासभा (गाँव के वरिष्ठ ब्राह्मणो, जिन्हें **vxgkj** कहा जाता था, की सभा थी।)

(3) नगरम् (व्यापारी समुदाय की महत्वपूर्ण प्रशासकीय सभा थी।)

ग्राम सभा शासन कार्यों के संचालन के लिए कई समितियों का गठन करती थी। जैसे सामान्य प्रबंध समिति, उपवन समिति, सिंचाई समिति, कृषि समिति, शिक्षा समिति, लेखा जोखा समिति, आदि। समिति को वरियम् कहते थे इन समितियों के माध्यम से ग्राम सभा अनेक कार्य करती थी, जैसे मंदिर तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं की देखरेख, व्यापार की सुविधा के लिए राजपथों का निर्माण एवं मरम्मत, सिंचाई, सफाई आदि। सभा के सदस्यों का चुनाव लौटरी द्वारा किया जाता था। समिति के सदस्यों के लिए कुछ योग्यताएँ निश्चित की गई थीं। इसकी जानकारी उत्तरमेरूर के अभिलेख से मिलती है।

©BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

अभिलेख

तमिलनाडु के चिंगलपुट जिले के उत्तरमेरूर अभिलेख के अनुसार सभा की सदस्यताः सभा की सदस्यता के लिए इच्छुक लोगों को ऐसी भूमि का स्वामी होना चाहिए, जहाँ से भू–राजस्व वसूला जाता है। उनके पास अपना घर होना चाहिए । उनकी उम्र 35–70 के बीच होनी चाहिए। उन्हें वेदों का ज्ञान होना चाहिए। उन्हें प्रशासनिक मामलों की अच्छी जानकारी होनी चाहिए और ईमानदार होना चाहिए। यदि कोई पिछले तीन सालों में किसी समिति का सदस्य रहा तो वह किसी और समिति का सदस्य नहीं बन सकता। जिसने अपने या अपने संबंधियों के खातिर राजस्व जमा नहीं कराये हैं वह चुनाव नहीं लड़ सकता।

भव्य मंदिरः–

अभी आपने चोल सम्राज्य एंव उसकी कुछ विशेषताओं को देखा। आप सोच रहे होंगे कि इस साम्राज्य के शासक अपना ज्यादा समय युद्ध में ही बिताते होंगे। लेकिन चोल राजाओं द्वारा कई वैभव शाली और भव्य मंदिर बनाये गये, जिसमें तंजौर का वृहदेश्वर मंदिर एव गंगईकोण्डचोलपुरम के मंदिर प्रसिद्ध हैं ये मंदिर स्थापत्य और मूर्ति कला की सुंदर प्रस्तुति है। (इनके बारे में हम विस्तृत रूप से इकाई–5 में पढ़ेंगे) इन मंदिरों में पूजा–पाठ के साथ–साथ जीवन की अन्य गतिविधियाँ भी चलती थीं।

वृहदेश्वर मंदिर तंजावुर

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED

चोल शासकों के काल में राजाओं, व्यापारियों तथा धन्य लोगों द्वारा मंदिरों को काफी मात्रा में सोना, चांदी एवं बहुमूल्य रत्नों के अतिरिक्त भूमि तथा ग्राम दान दिये जाने लगे। इससे मंदिर के कर्मचारियों (मंदिर के लिये काम करने वाले) जैसे– पुरोहित, मालाकार, बावर्ची, मेहतर, संगीतकार, नर्तक आदि की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई। इन कर्मचारियों को उनकी सेवा के बदले अनाज तथा बाद में भूमि भी दी जाने लगी। मंदिरों द्वारा भूमि हस्तांतरण करने के कारण मंदिर की आर्थिक व्यवस्था में

सामंती प्रवृतियों का समावेश होता गया। हस्तांतरित भूमि से अतिरिक्त कर की मांग से किसानों की परेशानी बढ़ी। इसके साथ ही केन्द्रीय सत्ता के कमजोर होने पर सांमती ढाँचे की आर्थिक व्यवस्था और मजबूत होती गई। चोल राज्यों का मंदिर सामाजिक कार्यों का केन्द्र भी था। उत्सवों, और धार्मिक त्योहारों पर आसपास के क्षेत्रों के लोगों के एकत्र होने का स्थान मंदिर ही था। मंदिर में ही ग्राम सभाएँ अपनी बैठके किया करती थीं। मंदिर के प्रांगण में ही विद्यालय लगता था। आमतौर पर ब्राह्मण ही पढ़ते और पढ़ाते थे। इन्हीं विद्यालयों में पांडुलिपियाँ सुरक्षित रखी जाती थीं।

भारत के वैसे मंदिरों का पता लगाएँ जहाँ आज भी भक्तों द्वारा बहुमूल्य उपहार चढ़ाये जाते हैं। उपहार चढ़ाने के पीछे लोगों की क्या मंशा रहती हैं ?

कृषि और सिंचाई

चोल प्रशासन ने कृषि और सिंचाई पर समुचित ध्यान देकर अपने राज्य को समृद्ध बनाने का प्रयास किया। उस समय दक्षिण भारत में कृषि योग्य भूमि भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थी।

इसके अतिरिक्त चोल सम्राटों ने जंगलों को साफ कराकर कृषि योग्य भूमि का पर्याप्त विस्तार किया था। उस समय दक्षिण भारत में सिंचाई के प्राकृतिक साधनों का अभाव था। इस समस्या के समाधान के लिए सिंचाई के अन्य कृत्रिम साधनों पर काफी बल दिया गया। समकालीन स्रोतों से हमें ज्ञात होता है कि सिंचाई के साधनों की रक्षा और विस्तार को पुण्य कार्य के रूप में देखा जाता था। सिंचाई के लिए कई पद्धतियाँ अपनाई जाती थीं। उस समय सिंचाई के लिए तालाब जलाशय (जिसमें जल द्वार हो) और कुओं का इस्तेमाल होता था। वर्षा के जल को बड़े–बड़े तालाबों में एकत्र किया जाता था। तालाब के जल को खेतों तक पहुँचाने के लिए नहरों का निर्माण किया गया।

नवीं शताब्दी तमिलनाडु का एक जलद्वार। हौज से नदी की शाखाओं में पानी के प्रवाह का इसके जरिए नियंत्रित किया जाता था। इस पानी से खेत सींचे जाते थे।

© BSTBPC WEBCOPY: NOT TO BE PUBLISHED

'अणिकट' शब्द तमिल के दो शब्दों से मिलाकर बना है। 'अणि' अर्थात बाँध और 'कट्टू' अर्थात निर्माण। चोल शासकों के समय कावेरी नदी पर बनाया गया महा 'अणिकट' कावेरी नदी के पानी को सिंचाई के लिए प्रयोग करने का प्रथम प्रयास था।

बड़ी सिंचाई योजनाओं के लिए बाँध और अणिकट भी होते जो राज्य के नियंत्रण में थे। अब जरा गौर करें कि सिंचाई के कार्यो में योजना की जरूरत होती है। जैसे श्रम संसाधनों को व्यवस्थित करना, इस पर ध्यान देना कि पानी का बँटवारा कैसे हो। ज्यादातर शासकों एवं गाँव में रहनेवाले लोगों ने इन गतिविधियों में सक्रिय रूप से दिलचस्पी दिखाई। तालाबों की देख–रेख करना ग्राम सभाओं का एक महत्वपूर्ण कार्य था।

पालवंश:—

BSTBPC
WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

जैसा कि आपने देखा कि आठवीं शताब्दी के मध्य पूर्वी भारत (बिहार एवं बंगाल) में पालवंश का उदय हुआ। इस वंश का संस्थापक गोपाल था जिसका चयन स्वंय वहाँ की जनता ने किया था। गोपाल के बाद धर्मपाल, देवपाल, एवं महिपाल अनेक ऐसे राजा हुये जिन्होंने उत्तरी भारत में एक मजबूत राज्य के रूप में उभारने का प्रयास किया। स्मरण करें इनमें से कई राजाओं ने त्रिपक्षीय संर्घष में भाग लेकर इसे एक केन्द्रीय सत्ता बनाने की भरपूर कोशिश की। संभवतः बिहार का मुंगेर इनकी राजधानी थी।

अवलोकितेश्वर (विष्णु)

पाल शासकों का काल, कला–कौशल स्थापत्य एवं शिक्षा के लिए विख्यात है। यहाँ हम उनकी मूर्ति कला एवं उनकी शिक्षा में दिये गये योगदानों की विशेष रूप से चर्चा करेगें।

भगवान बुद्ध

मूर्ति कला की एक विशिष्ट शैली(भारतीय कला की पूर्वी भारत की मूर्ति शैली) का जन्म इस समय हुआ। नालंदा, बोधगया, कुर्किहार कला के केन्द्र बन गये जहाँ प्रस्तर एवं धातु प्रतिमाओं का बड़े पैमाने पर निर्माण हुआ। पालकालीन मूर्तियाँ तत्कालीन धार्मिक विश्वासों से प्रेरित होकर बनाये गये थे। इनमें ज्यादातर बुद्ध की मूर्तियाँ थीं ब्राह्मण, जैन एवं अन्य देवी–देवताओं की मूर्तियाँ भी मिली हैं। पूर्वी भारत की इस विशिष्ट मूर्ति कला में काले–स्लेटी रंग के कसौटी पत्थर का उपयोग किया है। इस शैली की मूर्तियाँ मुख्यतः पृष्ट–शिला पट्टा पर उकेर कर बनायी गयी है, प्रारंभ में मूर्तियों के प्रभा मण्डल अलंकृत नहीं थे बाद में अलंकृत प्रभा मण्डल बनाये गये साथ ही पृष्ठ शिखा को भी अभिप्रायों से अलंकृत किया गया।

पालकला के अंतर्गत बौद्ध मूर्तियों में बुद्ध के अतिरिक्त बोधिसत्व, तारा, तंत्रयानी बौद्ध देव आदि प्रमुख है। ब्राह्मण देवताओं में विष्णु, शिव, सूर्य, दुर्गा, गणेश आदि की प्रतिमाएँ बनी। जैन मूर्तियों में लगभग सभी तीर्थंकरों का प्रतिनिधित्व देखने को मिलता है।

पटना संग्राहालय में संग्रहित पालकालीन सर्वोत्तम उदाहरणों में एकसारी (सारण) से प्राप्त अवलोकितेश्वर, भूमि स्पर्श मुद्रा में बुद्ध मैत्रेय की प्रतिमाएँ, मुंगेर से प्राप्त मकरमुख प्रणाल आदि प्रमुख हैं। इन्हें आप आज भी पटना संग्रांहालय में जाकर देख सकते हैं। पाल शासकों के समय में कई महत्वपूर्ण शैक्षिक केन्द्रों की स्थापना हुई। प्रथम शासक गोपाल ने अपने शासन के दौरान ओदन्तपुरी (वर्त्तमान बिहारशरीफ) में एक मठ तथा विश्वविद्यालय का निमार्ण करवाया। धर्मपाल ने आज के भागलपुर जिले में विक्रमशिला विश्वविद्यालय का निर्माण करवाया था। उसने नालंदा महाविहार को भी दान दिए।

©BSTBPC WEBCOPY. NOT TO BE PUBLISHED

अभ्यास

फिर से याद करें

(1) जोड़े बनाइए

सोमनाथ	गुर्जर प्रतिहार
पालवंश	लोगों द्वारा चयनित शासक
गोपाल	त्रिपक्षीय संघर्ष
कन्नौज	गुजरात
मध्य भारत	बंगाल

(2) दक्षिण के प्रमुख राज्य कौन–कौन थे ?

(3) उस समय राजा कौन–कौन सी उपाधियाँ धारण करते थे ?

(4) बिहार एवं बंगाल मे किन वंशों का शासन था।

vkb, le>

(5) तमिल क्षेत्र में किस तरह की सिंचाई व्यवस्था का विकास हुआ?

(6) कन्नौज शहर तीन शक्तियों के संघर्ष का केन्द्र बिन्दु क्यों बना ?

(7) महमूद गजनवी अपने विजय अभियान में क्यों सफल रहा?

(8) सामंतवाद का उदय किस प्रकार हुआ?

vkb, fवचार करें

(9) तत्कालीन राज्यों की प्रशासनिक व्यवस्था आज की प्रशासनिक व्यवस्था से कैसे भिन्न थी ?

(10) क्या आज भी हमारे समाज में सामंतवादी व्यवस्था के लक्षण दिखते हैं?

vkb, djd n[k%

(11) मध्यकाल के मंदिर अपनी धन दौलत के लिए काफी प्रसिद्ध थे। भव्यता के दृष्टिकोण से आप अपने पास के मन्दिर से तुलना करें।

(12) भारत के मानचित्र पर प्रतिहार, पाल और राष्ट्रकूट वंश द्वारा शासित क्षेत्रों को दिखाएँ । वर्तमान समय में ये भारत के किस भाग में अवस्थित हैं ?

© BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED